अध्याय 57.
मार्गणा

1. **मार्गणा किसे कहते हैं ?**
मार्गणा, गवेषणा और अन्वेषण ये तीनों शब्द पर्यायवाची हैं। जिनमें अथवा जिनके द्वारा जीवों की खोज की जाती है, उसे मार्गणा कहते हैं। (श्री धवला, पु. 1/2/132)
2. **मार्गणाएँ कितनी होती हैं ?**
मार्गणाएँ 14 होती हैं -1. गति मार्गणा 2. इन्द्रिय मार्गणा 3. काय मार्गणा 4.योग मार्गणा 5. वेद मार्गणा 6. कषाय मार्गणा 7. ज्ञान मार्गणा 8. संयम मार्गणा 9. दर्शन मार्गणा 10. लेश्या मार्गणा 11. भव्यत्व मार्गणा 12. सम्यक्त्व मार्गणा 13. संज्ञी मार्गणा 14. आहारक मार्गणा। (श्री धवला, पु. 1/4/133)
3. **गति मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन से गुणस्थान होते हैं ?**
जिस कर्म के उदय से जीव नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव पने को प्राप्त होता है, उसे गति कहते हैं। गति की अपेक्षा जीवों का परिचय करना गति मार्गणा है। गति मार्गणा के चार भेद हैं-
   1. **नरकगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा का नारक भाव होता है, उसे नरकगति कहते हैं। नरकगति में 1 से 4 गुणस्थान तक होते हैं।
   2. **तिर्यञ्चगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा तिर्यञ्च भाव को प्राप्त होता है, उसे तिर्यञ्चगति कहते हैं। तिर्यञ्चगति में 1 से 5 गुणस्थान तक होते हैं।
   3. **मनुष्यगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा मनुष्य भाव को प्राप्त होता है, उसे मनुष्यगति कहते हैं। मनुष्यगति में 1 से 14 गुणस्थान तक होते हैं।
   4. **देवगति** - जिस कर्म का निमित्त पाकर आत्मा देव भाव को प्राप्त होता है, उसे देवगति कहते हैं। देवगति में 1 से 4 गुणस्थान तक होते हैं। (सर्वार्थसिद्धि, 8/11/755)
4. **इन्द्रिय मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?**
एकेन्द्रियादि जाति नामकर्म के उदय से जीव की जो एकेन्द्रिय आदि अवस्था होती है, उसे इन्द्रिय कहते हैं। इन्द्रिय की अपेक्षा जीवों का परिचय करना इन्द्रिय मार्गणा है। इन्द्रिय मार्गणा के पाँच भेद हैं। एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय,चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय। एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक मात्र प्रथम गुणस्थान होता है एवं पञ्चेन्द्रिय में 1 से 14 गुणस्थान तक होते हैं। (सर्वार्थसिद्धि, 8/11/755)
5. **काय मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?**
आत्मा की प्रवृत्ति द्वारा संचित किए गए पुद्‌गल पिंड को काय कहते हैं। काय की अपेक्षा जीवों का परिचय करना काय मार्गणा है। काय मार्गणा के छः भेद हैं। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक एवं त्रसकायिक। पञ्च स्थावरों में मात्र प्रथम गुणस्थान होता है एवं त्रसकायिक में गुणस्थान 1 से 14 तक होते हैं। (श्री धवला, पु. 1/139)
6. **योग मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?**

काय, वचन व मन के निमित्त से होने वाले आत्मप्रदेशों के हलन-चलन को योग कहते हैं। योग की अपेक्षा जीवों का परिचय करना योग मार्गणा है। योग मार्गणा के 15 भेद हैं। (सर्वार्थसिद्धि, 6/1/610)

	योग	गुणस्थान
1.	सत्य मनोयोग	1 से 13 तक
2.	असत्य मनोयोग	1 से 12 तक
3.	उभय मनोयोग	1 से 12 तक
4.	अनुभय मनोयोग	1 से 13 तक
5.	सत्य वचनयोग	1 से 13 तक
6.	असत्य वचनयोग	1 से 12 तक
7.	उभय वचनयोग	1 से 12 तक
8.	अनुभय वचनयोग	1 से 13 तक
9.	कार्माण काययोग	1, 2, 4 एवं 13 वाँ
10.	औदारिकमिश्र काययोग	1, 2, 4 एवं 13 वाँ
11.	औदारिक काययोग	1 से 13 तक
12.	वैक्रियिक मिश्रकाययोग	1, 2 एवं 4
13.	वैक्रियिक काययोग	1 से 4 तक
14.	आहारक मिश्रकाययोग	6 वाँ
15.	आहारक काययोग	6 वाँ

7. वचनयोग और मनोयोग के चार-चार भेदों का स्वरूप क्या है ?

पदार्थ को कहने या विचारने के लिए जीव की सत्य, असत्य, उभय और अनुभय रूप चार प्रकार के वचन और मन की जो प्रवृत्ति होती है, उसे क्रम से सत्य वचनयोग, सत्य मनोयोग आदि कहते हैं।

सत्य के विषय में होने वाली मन की प्रवृत्ति को सत्य कहते हैं। जैसे-'यह जल है'। असत्य के विषय में होने वाली मन की प्रवृत्ति को असत्य कहते हैं। जैसे-मृगमरीचिका को जल कहना । दोनों के विषयभूत पदार्थ को उभय कहते हैं। जैसे-कमण्डलु को घट कहना । क्योंकि कमण्डलु घट का कार्य करता है, इसलिए कथंचित् सत्य है और घटाकार नहीं है, इसलिए कथंचित् असत्य है। जो दोनों ही सत्य और असत्य का विषय नहीं होता है ऐसे पदार्थ को अनुभय कहते हैं। जैसे-सामान्य रूप से यह प्रतिभास होना कि ''यह कुछ है'' यहाँ सत्य-असत्य का कुछ भी निर्णय नहीं हो सकता इसलिए अनुभय है। जैसे गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागरजी से श्रावक कहें हमारे नगर में आइए ? उत्तर मिलेगा 'देखो'। यह अनुभय वचन योग है। न सत्य है और न असत्य है।

1. **कार्मण काययोग** - जब यह जीव मरण कर नया शरीर धारण करने के लिए विग्रहगति में जाता है तब कार्मण शरीर के निमित्त से आत्म प्रदेशों का जो परिस्पंदन होता है, उसे कार्मण काययोग कहते हैं।

   विग्रहगति के अलावा केवली भगवान् के प्रतर और लोकपूरण समुद्घात में भी कार्मण काययोग होता है।

2. **औदारिकमिश्र काययोग** - औदारिक शरीर की उत्पत्ति प्रारम्भ होने के प्रथम समय से लेकर जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं कर लेता तब तक औदारिकमिश्र काययोग होता है। यहाँ वह जीव कार्माण वर्गणाओं से मिश्रित औदारिक वर्गणाओं को ग्रहण करता है।
3. **औदारिक काययोग**- मनुष्य और तिर्यञ्चों के शरीर को औदारिक काय कहते हैं और उसके निमित्त से जो योग होता है, उसे औदारिक काययोग कहते हैं।
4. **वैक्रियिकमिश्र काययोग**-वैक्रियिक शरीर की उत्पत्ति प्रारम्भ होने के प्रथम समय से लगाकर जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं कर लेता तब तक वैक्रियिकमिश्र काययोग रहता है। इस काल में वह जीव कार्मण वर्गणाओं से मिश्रित वैक्रियिक वर्गणाओं को ग्रहण करता है, उसे वैक्रियिकमिश्र काययोग कहते हैं।
5. **वैक्रियिक काययोग**-देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियिक काय कहते हैं और उसके निमित्त से जो योग होता है, उसे वैक्रियिक काययोग कहते हैं।
6. **आहारकमिश्र काययोग** -आहारक शरीर की उत्पत्ति होने के प्रथम समय से लगाकर जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण न हो तब तक आहारकमिश्र काय कहलाता है एवं उसके निमित्त से जो योग होता है, उसे आहारकमिश्र काययोग कहते हैं। इस काल में वह जीव औदारिक वर्गणाओं से मिश्रित आहारक वर्गणाओं को ग्रहण करता है।
7. **आहारक काययोग**- छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि के सूक्ष्म तत्त्व के विषय में जिज्ञासा आदि कारण होने पर उनके मस्तक से एक हाथ ऊँचा सफेद रंग का पुतला निकलता है। वह जहाँ कहीं भी केवली अथवा श्रुतकेवली हों, वहाँ अपनी जिज्ञासा का समाधान करके वापस आ जाता है, इसे आहारककाय कहते हैं एवं इसके निमित्त से होने वाला योग आहारक काययोग कहलाता है। (जीवकाण्ड, गाथा 230-241)

8. **वेद मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?**

''वेद्यत इति वेदः'' जो वेदा जाए, अनुभव किया जाए, उसे वेद कहते हैं। वेद की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना वेद मार्गणा है। वेद के मूलतः तीन भेद हैं। स्त्रीवेद, पुरुषवेद एवं नपुंसक वेद। इनमें गुणस्थान 1 से 9 तक होते हैं। द्रव्यवेद और भाववेद की अपेक्षा तीनों वेद दो प्रकार के होते हैं।

वेद नोकषाय के उदय से स्त्री की पुरुषाभिलाषा, पुरुष की स्त्री सम्बन्धी अभिलाषा और नपुंसक की उभय मुखी अभिलाषा को भाव वेद कहते हैं तथा नामकर्म के उदय से उत्पन्न स्त्री, पुरुष और नपुंसक के बाह्य चिह्नों को द्रव्यवेद कहते हैं। पुरुषवेद तृण की आग के समान, स्त्रीवेद कंडे की आग के समान एवं नपुंसकवेद ईंट पकाने के अवा की आग के समान होता है। (जीवकाण्ड, गाथा 273-276)

विशेष-कर्मभूमि के मनुष्यों एवं तिर्यञ्चों में द्रव्यवेद व भाववेद में असमानता भी पाई जाती है। जैसे- कोई द्रव्य से पुरुष वेद है, उसके भाव से तीन में से कोई भी वेद हो सकता है। इसी प्रकार स्त्रीवेद व नपुंसकवेद में भी हो सकता है किन्तु देव, नारकी तथा भोगभूमि के मनुष्यों व तिर्यञ्चों में जैसा द्रव्यवेद होता है वैसा ही भाववेद रहता है। एकेन्द्रिय (राजवार्तिक, 2/22/5)से चार इन्द्रिय तक नियम से द्रव्यवेद व भाववेद नपुंसक ही रहता है। द्रव्य से स्त्री व नपुंसकवेद वालों के गुणस्थान 1 से 5 तक हो

सकते हैं तथा द्रव्य से पुरुषवेद वाले के सभी 14 गुणस्थान हो सकते हैं।

9. कषाय मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

जो आत्मा के सम्यक्त्वादि गुणों का घात करें, उसे कषाय कहते हैं। इसके 25 भेद हैं -

1-4. अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ-जो आत्मा के सम्यक्त्व तथा चारित्र गुण का घात करती है। 1 से 2 गुणस्थान तक। (जीवकाण्ड, गाथा 283)

5-8. अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ-जो कषाय एक देश चारित्र का घात करती है। 1 से 4 गुणस्थान तक।

9-12. प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया,लोभ-जो कषाय सकल संयम का घात करती है। 1से 5 गुणस्थान तक।

13-16. संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ-जो कषाय यथाख्यात संयम का घात करती है। संज्वलन क्रोध, मान, माया में 1 से 9 गुणस्थान तक। संज्वलन लोभ में 1 से 10 गुणस्थान तक।

नो कषाय - नो अर्थात् ईषत् (किंचित्) कषाय का वेदन करावे, उसे नो कषाय कहते हैं।

17. हास्य - जिसके उदय से हँसी आवे। 1 से 8 गुणस्थान तक।

18. रति - जिसके उदय से क्षेत्र आदि में प्रीति हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

19. अरति - जिसके उदय से क्षेत्र आदि में अप्रीति हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

20. शोक - जिसके उदय से इष्ट वियोगज क्लेश उत्पन्न हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

21. भय - जिसके उदय से भय उत्पन्न हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

22. जुगुप्सा - जिसके उदय से ग्लानि उत्पन्न हो। 1 से 8 गुणस्थान तक।

23. स्त्रीवेद - जिसके उदय से स्त्री सम्बन्धी भावों को प्राप्त हो। 1 से 9 गुणस्थान तक।

24. पुरुषवेद - जिसके उदय से पुरुष सम्बन्धी भावों को प्राप्त हो। 1 से 9 गुणस्थान तक।

25. नपुंसकवेद- जिसके उदय से नपुंसक सम्बन्धी भावों को प्राप्त हो। 1 से 9 गुणस्थान तक।

विशेष- जहाँ अनन्तानुबन्धी कषाय है वहाँ नियम से अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण एवं संज्वलन कषाय भी रहेगी। इसी प्रकार जहाँ अप्रत्याख्यानावरण कषाय है, वहाँ प्रत्याख्यानावरण एवं संज्वलन कषाय भी रहेगी एवं जहाँ प्रत्याख्यानावरण कषाय है, वहाँ संज्वलन कषाय भी रहेगी एवं जहाँ मात्र संज्वलन है वहाँ संज्वलन कषाय ही रहेगी। जहाँ हास्य कषाय है वहाँ रति कषाय भी रहेगी। इसी प्रकार जहाँ शोक कषाय है वहाँ अरति कषाय भी रहेगी। भय और जुगुप्सा कषाय में से कोई भी एक या दोनों या दोनों कषायों से रहित भी हो सकता है।

10. ज्ञान मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

जो जानता है, वह ज्ञान है, ज्ञान की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना ज्ञान मार्गणा है। इसके आठ भेद हैं -

1. **कुमतिज्ञान**-सम्यक्त्व के न होने पर होने वाले मतिज्ञान को कुमतिज्ञान कहते हैं।
2. **कुश्रुतज्ञान**-सम्यक्त्व के न होने पर होने वाले श्रुतज्ञान को कुश्रुतज्ञान कहते हैं।
3. **कुअवधिज्ञान**-सम्यक्त्व के न होने पर होने वाले अवधिज्ञान को कुअवधिज्ञान कहते हैं।

4. **मतिज्ञान** - जो ज्ञान पाँच इन्द्रिय और मन के द्वारा होता है, उसे मतिज्ञान कहते हैं। (जी.का. 306)
5. **श्रुतज्ञान** - मतिज्ञान से जाने हुए पदार्थ का जो विशेष ज्ञान होता है, उसे श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे - ''जीवः अस्ति'' ऐसा शब्द कहने पर कर्ण (श्रोत्र) इन्द्रिय रूप मतिज्ञान के द्वारा ''जीवः अस्ति'' यह शब्द ग्रहण किया। इस शब्द से जो ''जीव नामक पदार्थ है'' ऐसा ज्ञान हुआ सो श्रुतज्ञान है। यह अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है और जो अक्षर के निमित्त से उत्पन्न नहीं होता है, उसे अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे- शीतल पवन का स्पर्श होने पर वहाँ शीतल पवन का जानना तो मतिज्ञान है और उस ज्ञान से वायु की प्रकृति वाले को यह पवन अनिष्ट है, ऐसा जानना श्रुतज्ञान है। (जै.सि.को., 4/62)
6. **अवधिज्ञान** - द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की मर्यादा लिए हुए रूपी पदार्थों का इन्द्रियादिक की सहायता के बिना जो प्रत्यक्ष ज्ञान होता है, वह अवधिज्ञान है।
7. **मनःपर्ययज्ञान** -इन्द्रिय और मन की सहायता के बिना ही दूसरे के मन में स्थित रूपी पदार्थों का जो प्रत्यक्ष ज्ञान होता है, वह मनःपर्ययज्ञान है। मनःपर्ययज्ञान का क्षयोपशम 6 से 12 वें गुणस्थान तक रहता है किन्तु इसका प्रयोग छठवें गुणस्थान में होता है। इसके साथ प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन, आहारक काययोग, आहारक मिश्रकाययोग, परिहार विशुद्धि संयम, स्त्रीवेद एवं नपुंसक वेद नहीं होता है। (राजवार्तिक, 1/9/4)
8. **केवलज्ञान** - जो त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यों की अनन्त पर्यायों को एक साथ स्पष्ट रूप से जानता है, उसे केवलज्ञान कहते हैं। (प्रवचनसार, गाथा 47)

ज्ञान		**गुणस्थान**
कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान एवं कुअवधिज्ञान	-	1 से 2 तक।
मतिज्ञान, श्रुतज्ञान एवं अवधिज्ञान	-	4 से 12 तक।
मनःपर्ययज्ञान	-	6 से 12 तक।
केवलज्ञान	-	13 से 14 तक एवं सिद्धों में।

11. **संयम मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?**

प्राणियों और इन्द्रियों के विषय में अशुभ प्रवृत्ति का त्याग करना संयम है। संयम की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना संयम मार्गणा है। इसके सात भेद हैं-

1. **असंयम**-जहाँ किसी प्रकार के संयम या संयमासंयम का अंश भी न हो, उसे असंयम कहते हैं।
2. **संयमासंयम**-सम्यग्दर्शन के साथ पाँचों पापों का एक देश त्याग करने को संयमासंयम कहते हैं।
3. **सामायिक चारित्र** - सर्वकाल में सम्पूर्ण सावद्य का त्याग करना सामायिक चारित्र है। (श्री धवला, 1/123/371)
4. **छेदोपस्थापना चारित्र** - प्रमाद के निमित्त से व्रतों में दोष होने पर भली प्रकार से उसको दूर कर अपने आप को पुनः उसी में स्थापित करना छेदोपस्थापना चारित्र है। (राजवार्तिक, 9/18/6,7)
5. **परिहार विशुद्धि संयम** - प्राणी वध से निवृत्ति को परिहार कहते हैं। इस युक्त शुद्धि जिस संयम में होती है, उसे परिहार विशुद्धि संयम कहते हैं। इनके शरीर से किसी भी जीव का घात नहीं होता है।

इस संयम वाले मुनि तीनों सन्ध्याकालों को छोड़कर प्रतिदिन दो कोस (6 किलोमीटर) विहार करते हैं। रात्रि में विहार (गमन) नहीं करते हैं। परिहार विशुद्धि संयम के साथ आहारक काययोग, आहारकमिश्र काययोग, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, मनःपर्ययज्ञान एवं उपशम सम्यग्दर्शन नहीं रहता है। **विशेष** -जो तीस वर्ष तक घर में रहकर इसके पश्चात् मुनि दीक्षा लेते हैं और तीर्थङ्कर के पादमूल में वर्ष पृथक्त्व तक प्रत्याख्यान पूर्व का अध्ययन करते हैं, ऐसे मुनि के यह परिहार विशुद्धि संयम प्रकट होता है। (राजवार्तिक, 9/18/8)

6. **सूक्ष्मसाम्पराय संयम** - जिस संयम में लोभ कषाय अति सूक्ष्म रह गई हो, उसे सूक्ष्म साम्पराय संयम कहते हैं। (राजवार्तिक, 9/18/9)
7. **यथाख्यात संयम** - समस्त मोहनीय कर्म के उपशम या क्षय से जहाँ यथा अवस्थित आत्म-स्वभाव की उपलब्धि हो जाती है, उसे यथाख्यात संयम कहते हैं। (राजवार्तिक, 9/18/11)

संयम		गुणस्थान
1. असंयम	-	1 से 4 तक।
2. संयमासंयम	-	5 वाँ।
3. सामायिक चारित्र	-	6 से 9 तक।
4. छेदोपस्थापना चारित्र	-	6 से 9 तक।
5. परिहार विशुद्धि संयम	-	6 से 7 तक।
6. सूक्ष्मसाम्पराय संयम	-	10 वाँ।
7. यथाख्यात संयम	-	11 से 14 तक।

12. दर्शन मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन से गुणस्थान होते हैं ?

''विषय विषयि सन्निपाते सति दर्शनं भवति''। विषय और विषयी का सन्निपात होने पर ज्ञान के पूर्व जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे दर्शन कहते हैं। दर्शन की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना दर्शन मार्गणा है। इसके चार भेद हैं -(सर्वार्थसिद्धि, 1/15/190)

1. **चक्षुदर्शन** - चक्षु इन्द्रिय से होने वाले ज्ञान के पहले पदार्थ का जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे चक्षुदर्शन कहते हैं।
2. **अचक्षुदर्शन**-चक्षु इन्द्रिय के बिना अन्य इन्द्रियों और मन से होने वाले ज्ञान के पूर्व पदार्थ का जो सामान्य प्रतिभास होता है, उसे अचक्षुदर्शन कहते हैं।
3. **अवधिदर्शन**-अवधिज्ञान के पूर्व होने वाला सामान्य प्रतिभास अवधिदर्शन है।
4. **केवलदर्शन** - केवलज्ञान के साथ होने वाले सामान्य प्रतिभास को केवलदर्शन कहते हैं।

दर्शन		गुणस्थान
1. चक्षुदर्शन	-	1 से 12 तक।
2. अचक्षुदर्शन	-	1 से 12 तक।
3. अवधिदर्शन	-	4 से 12 तक।
4. केवलदर्शन	-	13 से 14 तक एवं सिद्धों में भी।

13. लेश्या मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन से गुणस्थान होते हैं ?

''लिम्पतीति लेश्या''- जो लिम्पन करती है, उसको लेश्या कहते हैं। अर्थात् जो कर्मों से आत्मा को लिप्त करती है, उसको लेश्या कहते हैं। लेश्या की अपेक्षा से जीवों का परिचय करना लेश्या मार्गणा है। इसके छः भेद हैं -

1. **कृष्ण लेश्या** - तीव्र क्रोध करने वाला हो, शत्रुता को न छोड़ने वाला हो, लड़ना जिसका स्वभाव हो, धर्म और दया से रहित हो, दुष्ट हो आदि। ये सब लक्षण कृष्ण लेश्या वाले जीव के हैं।
2. **नील लेश्या**-आलसी, मंदबुद्धि, स्त्री लुब्धक, प्रवंचक, कातर, सदामानी आदि। ये सब नील लेश्या के लक्षण हैं।
3. **कापोत लेश्या**- शोकाकुल, सदारुष्ट, परनिंदक, आत्म प्रशंसक, संग्राम में माहिर आदि कापोत लेश्या के लक्षण हैं।
4. **पीत लेश्या**-प्रबुद्ध (जागृत), करुणा युक्त, जो कार्य-अकार्य का विचार करने वाला हो, लाभालाभ में समता रखने वाला हो आदि। पीत लेश्या के लक्षण हैं।
5. **पद्म लेश्या**-दयाशील हो, त्यागी हो, भद्र हो, साधुजनों की पूजा में निरत हो, बहुत अपराध या हानि पहुँचाने वाले को भी क्षमा कर दे, आदि। पद्म लेश्या के लक्षण हैं।
6. **शुक्ल लेश्या**-जो शत्रु के दोषों पर भी दृष्टि न देने वाला हो, जिसे पर से राग-द्वेष व स्नेह न हो, आदि। शुक्ल लेश्या के लक्षण हैं।

लेश्या		**गुणस्थान**
1. कृष्ण लेश्या	-	1 से 4 तक
2. नील लेश्या	-	1 से 4 तक
3. कापोत लेश्या	-	1 से 4 तक
4. पीत लेश्या	-	1 से 7 तक
5. पद्म लेश्या	-	1 से 7 तक
6. शुक्ल लेश्या	-	1 से 13 तक

14. भव्य मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

भव्य और अभव्य के माध्यम से जीवों का परिचय करना भव्यत्व मार्गणा है। इसके दो भेद हैं-

1. **भव्य** - जिसके सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र भाव प्रकट होने की योग्यता है, वह भव्य है।
2. **अभव्य**-जिसके सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र भाव प्रकट होने की योग्यता नहीं है, वह अभव्य है।

सद्दहदि य पत्तेदि य रोचेदि य तह पुणो य फासेदि।
धम्मं भोगणिमित्तं ण दु सो कम्मक्खयणिमित्तं॥

अभव्य जीव भोग के लिए ही धर्म की श्रद्धा करता है, उसी की रुचि करता है और उसी का बार-बार स्पर्श करता है, परन्तु यह सब भोग के निमित्त करता है, कर्म क्षय के निमित्त नहीं। आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने समयसार, गाथा 293 में इस परणति वाले जीव को अभव्य कहा है।

भव्य		गुणस्थान
1. भव्य	–	1 से 14 गुणस्थान तक।
2. अभव्य	–	मात्र 1 गुणस्थान।

15. सम्यक्त्व मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

सात तत्त्वों तथा सच्चे देव, शास्त्र और गुरु का यथार्थ श्रद्धान प्रकट होने पर होने वाली आत्मा की उस शुद्ध परिणति को सम्यक्त्व कहते हैं। सम्यक्त्व की अपेक्षा जीवों का परिचय करने को सम्यक्त्व मार्गणा कहते हैं। इसके छः भेद हैं –

1. **मिथ्यात्व** – मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से होने वाले तत्त्वार्थ के अश्रद्धान रूप परिणामों को मिथ्यात्व कहते हैं।
2. **सासादन** – उपशम सम्यक्त्व के काल में कम-से-कम एक समय और अधिक-से-अधिक छः आवली शेष रहने पर अनन्तानुबन्धी कषाय के चार भेदों में से किसी एक कषाय का उदय होने से उपशम सम्यक्त्व से च्युत होने पर और मिथ्यात्व प्रकृति के उदय न होने से मध्य के काल में जो परिणाम होते हैं, उसे सासादन सम्यक्त्व कहते हैं।
3. **सम्यग्मिथ्यात्व** – जिसमें सम्यक् और मिथ्या रूप मिश्रित श्रद्धान पाया जाए, उसे सम्यग्मिथ्यात्व या मिश्र सम्यक्त्व कहते हैं।
4. **अ. प्रथमोपशम सम्यक्त्व**[1]– दर्शनमोहनीय की मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति, सम्यक् प्रकृति और अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ इन सात प्रकृतियों के उपशम से जो सम्यक्त्व होता है, उसे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

   विशेष – प्रथमोपशम सम्यक्त्व के साथ मरण नहीं होता है एवं आयुबन्ध भी नहीं होता है।

   ब. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व–क्षयोपशम सम्यक्त्व के अनंतर जो उपशम सम्यक्त्व होता है, उसे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं। यह भी सात प्रकृतियों के उपशम से होता है। सप्तम गुणस्थानवर्ती मुनि यदि उपशम श्रेणी चढ़े तब उसको क्षायिक सम्यक्त्व या द्वितीयोपशम सम्यक्त्व आवश्यक होता है।

   विशेष–अन्य आचार्यों के मतानुसार द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन चतुर्थ गुणस्थान से सप्तम गुणस्थानवर्ती क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि प्राप्त करता है। (श्री धवला,1/27/211, कार्तिकेयानुप्रेक्षा, 484 टीका, मूलाचार, 205 टीका)
5. **क्षयोपशम (वेदक)** – अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, मिथ्यात्व एवं सम्यग्मिथ्यात्व इन 6 प्रकृतियों के उदयाभावी क्षय व उपशम से तथा सम्यक् प्रकृति के उदय से जो सम्यक्त्व होता है, उसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।
6. **क्षायिक सम्यक्त्व** – सात प्रकृतियों के क्षय से जो सम्यक्त्व होता है, उसे क्षायिक सम्यक्त्व कहते हैं।

---

1. अनादि मिथ्यादृष्टि तो पाँच प्रकृतियों का उपशम करता है एवं मिथ्यादृष्टि पाँच, छः या सात प्रकृतियों का उपशम करता है।

सम्यक्त्व	गुणस्थान
1. मिथ्यात्व	प्रथम
2. सासादन	द्वितीय
3. सम्यग्मिथ्यात्व	तृतीय
4. उपशम सम्यक्त्व के दो भेद हैं -	
अ. प्रथमोपशम सम्यक्त्व	4 से 7 तक।
ब. द्वितीयोपशम सम्यक्त्व	4 से 11 तक।
5. क्षयोपशम सम्यक्त्व	4 से 7 तक।
6. क्षायिक सम्यक्त्व	4 से 14 तक एवं सिद्धों में भी।

16. संज्ञी मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

संज्ञी और असंज्ञी के माध्यम से जीवों के परिचय करने को संज्ञी मार्गणा कहते हैं। इसके दो भेद हैं-

1. **संज्ञी** - जो जीव शिक्षा, उपदेश, क्रिया और आलाप को ग्रहण करते हैं, उन्हें संज्ञी कहते हैं।
2. **असंज्ञी** - जो जीव शिक्षा, उपदेश, क्रिया और आलाप को ग्रहण नहीं करते हैं, उन्हें असंज्ञी कहते हैं।

संज्ञी	गुणस्थान
1. संज्ञी में	1 से 12 तक।
2. असंज्ञी में	प्रथम

17. केवली भगवान् संज्ञी हैं या असंज्ञी हैं ?

केवली भगवान् दोनों से रहित हैं।

केवली भगवान् संज्ञी नहीं होते हैं, क्योंकि ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म से रहित होने के कारण, केवली मन के अवलम्बन से बाह्य अर्थ का ग्रहण नहीं करते अतः केवली को संज्ञी नहीं कह सकते। केवली असंज्ञी भी नहीं हैं, क्योंकि जिन्होंने समस्त पदार्थों को साक्षात् कर लिया है, उन्हें असंज्ञी मानने में विरोध आता है।

सयोग केवली अनुभय हैं, ये संज्ञी नहीं हैं, क्योंकि भावमन नहीं है और न असंज्ञी हैं, क्योंकि अविवेकी नहीं है। सयोग केवली के यद्यपि द्रव्यमन है, परन्तु भावमन नहीं है।

18. आहारक मार्गणा किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं एवं उसमें कौन-कौन-से गुणस्थान होते हैं ?

आहारक एवं अनाहारक के माध्यम से जीवों के परिचय करने को आहारक मार्गणा कहते हैं। इसके दो भेद हैं -

1. **आहारक** - जो तीन शरीर और छः पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल वर्गणाओं को ग्रहण करता है, उसे आहारक कहते हैं।
2. **अनाहारक** - तीन शरीर और छः पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल वर्गणाओं को जो ग्रहण नहीं करता है, उसे अनाहारक कहते हैं। विग्रहगति में, तेरहवें गुणस्थान के प्रतर एवं लोकपूरण समुद्घात में एवं चौदहवें गुणस्थान में जीव अनाहारक होता है।

विशेष-यहाँ पर आहार शब्द से कवलाहार, लेपाहार, ओजाहार, मानसिकाहार, कर्माहार को

छोड़कर नोकर्माहार को ही ग्रहण करना है।

आहारक	गुणस्थान
1. आहारक में	1 से 13 तक।
2. अनाहारक में	1, 2, 4,13 (प्रतर एवं लोकपूरण समुद्घात में) एवं 14 वाँ।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. प्रथम गुणस्थान में तेरह योग होते हैं।
2. तृतीय गुणस्थान में जीव आहारक होता है।
3. कार्मण काययोग में जीव अनाहारक होता है।
4. छटवें गुणस्थान में 4 ज्ञान भी हो सकते हैं।
5. यथाख्यात संयम में जीव अनाहारक भी होता है।
6. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में जीव अनाहारक होता है।
7. परिहार विशुद्धि संयम के साथ द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होता है।
8. द्रव्य से स्त्रीवेदी है एवं भाव से पुरुषवेदी के गुणस्थान 1 से 5 तक हो सकते हैं।
9. मनःपर्ययज्ञानी आपकी मुट्ठी में क्या है बता सकता है।
10. अचक्षुदर्शन चार इन्द्रिय वाले जीवों को नहीं होता है।

अन्यत्र खोजिए -

1. कौन से आचार्य ने एकेन्द्रिय एवं विकलचतुष्क के अपर्याप्त दशा में द्वितीय गुणस्थान भी माना है और वह किस प्रकार घटित होता है ?
2. मनुष्यगति में उदय योग्य कितनी कर्म प्रकृतियाँ है ?
3. कार्मणकाययोग में द्वितीयोपशम सम्यक्त्व किस गति में जाते समय बनेगा ?
4. कार्मण काय योग में उदय योग्य कितनी प्रकृतियाँ हैं ?
5. ऋजुमति एवं विपुलमति मनःपर्ययज्ञान किसे कहते हैं ?
6. ओम् में पाँचों ज्ञान किस प्रकार गर्भित होते हैं ?
7. अन्तर मार्गणा कौन-कौन-सी हैं ?